सिमरन

भाग - १४

ईश्वर 'प्रेम स्वरूप' है तभी उसे 'प्रेम पुरुष' कहा गया है। अपनी रची हुई सृष्टि से ईश्वर बहुत प्यार करता है। वह जीवों का पालनहार है तथा शुभ चिंतक है।

सारि समालै निति प्रतिपालै प्रेम सहित गलि लावै ।। (पृ. ६१७)

प्रभु मेरो इत उत सदा सहाई ।। (पृ. १२१३)

सभ के प्रीतम स्रब प्रतिपालक सरब घटां आधारा ।।
(पृ. १२२०)

हम सब 'जीव' परमेश्वर की अंश हैं, इसलिए हमारे अन्दर प्रीत, प्रेम, प्यार की चिंगारी या किरण है। परमेश्वर ने अपने अथाह **प्यार की पूर्णता के लिए** यह सारी रचना रची है तथा इसमें अपने इलाही प्रेम की 'चिंगारी' रखी है ताकि **'परमेश्वर'** अपने अंश **'जीवों'** से प्रेम कर सके तथा उसके 'अंश' भी अपनी **'इलाही माता'** के इलाही प्रेम का जवाब (response) दे सकें ।

इस प्रेम में 'दैवीय-आकर्षण' है जिसे Divine gravity भी कहते हैं।

इस प्रकार सृष्टि के कण-कण में —

ईश्वर के प्रति

तथा

एक दूसरे के प्रति

इलाही प्रेम का आकर्षण स्वाभाविक है। इसी दैवीय आकषर्ण (cosmic attraction) के अधीन सूर्य, चन्द्रमा, धरती और तारागण भी एक दूसरे की ओर तथा अपने कर्ता अकाल पुरुष की ओर सदैव **आकर्षित होते रहते हैं।** इसी दैवीय आकर्षण को प्रीत, प्रेम, प्यार, स्नेह आदि नामों से याद किया जाता है तथा इसी को **नाम** या शब्द कहा गया है।

'आत्मिक मंडल' का संपूर्ण आकर्षण सृष्टि के कण-कण में **गुप्त प्राकृतिक नियमों अथवा हुक्म के अनुसार**, सृष्टि को किसी **विशेष 'संतुलन'** (balance) **में रखता है।** इसी लिए सारी सृष्टि युग-युगांतरों से बन्धी हुई **इलाही 'हुक्म' के प्रवाह में** लगातार इकसार चल रही है।

जब कभी भी इस प्राकृतिक संतुलन (natural balance) में कोई विघ्न (disturbance) पड़ता है तो दुनियां में **तबाही मच जाती है**, जैसे भूचाल, बाढ़, तुफान, महामारी आदि।

इसी प्रकार जब हमारा अहम्ग्रस्त मन परमेश्वर की दी हुई बुद्धि के द्वारा उक्तियाँ-युक्तियाँ, चतुराईयां आदि घोट-घोट कर **'अपने भाणे'** या अपनी इच्छा में ही काम करता है, तभी साथ लिखे 'हुक्म' से विमुख होकर **इलाही प्रीत तार** से टूट जाता है। इस प्रकार **'इलाही मां' की ममता भरी गोद**, प्रेम, सुख तथा बख्शिशों से वंचित हो जाता है।

यदि बिजली की तार में कोई खराबी आ जाए तो बल्ब बुझ जाता है तथा हमें अंधकार में ठोकरें खानी पड़ती हैं। इसी प्रकार यदि हमारी **'सुरति' की तार** हमारी अंतरआत्मा में स्थित परमेश्वर के शब्द, नाम, हुकम या 'जीवन-रौं' से टूट जाए तो हमारे मन पर अज्ञानता का **अंधकार** छा जाता है तथा हम अहम् के भ्रम-भुलाव में ठोकरें खाते तथा दुख कलेश भोगते हैं।

यदि हम पुनः अपनी इलाही माँ की प्रेममयी गोद का प्यार पाना चाहते हैं तो हमें **अर्न्तमुख हो कर** 'सिमरन' द्वारा **'शब्द-सुरति'** का अभ्यास करना पड़ेगा । **गुरमति अनुसार हमारी आत्मिक मंजिल 'शब्द-सुरति-लिवलीन' है।**

सबद-सुरति लिवलीन परबीन भए
पूरन ब्रहम एकै एक पहिचानीऐ । (क. भा. गु. १४७)

सबद-सुरति लिव अलख लखाए । (वा. भा. गु. ५/१५)

सूर्य की अनेक किरणें चारों ओर फैली हुई हैं। जब इन किरणों को **उत्तल ताल** (convex lens) के द्वारा एकत्रित किया जाए तो यह एक **शक्तिशाली प्रबल किरण** बन जाती है, जिसमें सूर्य की गरमी की शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि यह कागज़ को जला देती है। जब कि बिखरी हुई किरणों का कागज पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता ।

इसी प्रकार हमारे मन का ध्यान या वृत्तियां अनेक विचारों या पदार्थों में **खचित हो कर** बिखरी रहती हैं। इस कारण हमारा मन अति निर्बल हो गया है तथा हम छोटी सी बात से **घबरा जाते हैं या उबल पड़ते हैं।** जब इन वृत्तियों को किसी एक केन्द्र पर **'एकाग्र'** किया जाए तो यह 'सुरति' बन जाती है। ऐसी **एकत्रित हुई सुरति में** अत्यन्त शक्ति उत्पन्न हो जाती है जिससे अनेक प्रकार के मानसिक करिशमे-रिद्धियाँ-सिद्धियाँ, जादू-टोने आदि रचाए जाते हैं।

इसी **'सुरति' को 'शब्द' में जोड़ने** से 'सुरति' की एकाग्र हुई दामनिक शक्ति से हमारी विखंडित, तुच्छ रुचियाँ जल जाती हैं तथा मन निर्मल होता जाता है। निर्मल हुए मन पर किसी **'शुभ घड़ी' गुरु कृपा द्वारा** नाम की 'छूह' लग जाती है, तब हमारी अन्तरात्मा में **अनुभवी प्रकाश** हो जाता है तथा 'गुरशबदी गोबिंद गजिआ' हो जाता है।

परन्तु अधिकतर हमारी 'सुरति' 'मायकी मंडल' के करिश्मों में ही गलतान रहती है। इस का कारण यह है कि **'आत्म-मंडल'** के 'प्रकाश रूप' के विषय में हमारा ज्ञान या जानकारी **नाममात्र** ही है। वास्तव में हमें **'अनुभवी इलाही ज्ञान'** के विषय में —

पता ही नहीं
आवश्यकता ही नहीं
फुरसत ही नहीं ।

'गुरबाणी' में आत्म-मंडल के **अनुभवी-तजुरबों** को स्पष्ट शब्दों में दर्शाया गया है। परन्तु इन के आन्तरिक भावों की ओर हमारा ध्यान जाता ही नही। यही कारण है कि 'गुरबाणी' का पाठ, कीर्तन तथा कथा-वार्ता करते हुए भी हम पर 'गुरबाणी' की **पारस-कला** नहीं घटती। हमारी इस अवस्था को 'गुरबाणी' में यूं दर्शाया गया हैं —

सबदु न चीनै कथनी बदनी करे बिरिवआ माहि समानु ।।
(पृ. ३९)

त्रै गुण पड़हि हरि ततु न जाणहि ।।
मूलहु भुले **गुर सबदु न पछाणहि ।।** (पृ. १२८)

उपदेसु करै आपि न कमावै ततु सबदु न पछानै ।। (पृ. ३८०)

एकु सबदु तूं चीनहि नाही फिरि फिरि जूनी आवहिगा ।।
(पृ. ४३४)

जब हम किसी पदार्थ के विषय में पढ़ते या खोजबीन करते हैं तो हम उस पदार्थ की 'संगत' द्वारा उसके गुण-अवगुण ग्रहण करते हैं।

इसी प्रकार जब हम **'शब्द-सुरति'** का विचार और अभ्यास करते हैं तो हमें **'आत्म-मंडल' के दैवीय गुण सहज ही प्राप्त हो जाते हैं।**

मायकी-मंडल के **पदार्थों** की **शिक्षा** हमें 'माया-मंडल' में ही

फंसाए रखती है। परन्तु 'आत्म-मंडल' के **अनुभवी विचार** हमें मोह-माया के दायरे में से निकाल कर **'आत्म-मंडल'** का **आश्चर्यजनक विस्मित करने वाला ज्ञान देते हैं** तथा अंतर-आत्मा में **अनुभवी तजुरबे** करवाते हैं।

'मायकी मंडल' की **शिक्षा** अथवा **खोज** में तो हम जीवन पर्यन्त लगे रहते हैं तथा बहुत धन भी खर्च करते हैं परन्तु अन्तरमुखी शब्द सुरति की खोज के लिए हमें कोई खर्चा नहीं करना पड़ता तथा न ही इसके लिए कहीं विदेश जाने की आवश्यकता है।

चाहे वैज्ञानिक अविष्कारों के परिणामस्वरूप मनुष्य ने बहुत से **मायकी लाभ** और शारीरिक सुख प्राप्त कर लिए हैं परन्तु **'आत्मिक-ज्ञान'** के बिना **केवल मायकी-विज्ञान** के गल्त प्रयोग से संसार में हर तरफ अशांति, दुख, क्लेश, महामारी तथा भयानक लड़ाईयों के कारण अत्यंत तबाही हो रही है।

दूसरी ओर **अन्तरमुखी आत्मिक खोज** के फलस्वरूप अनेक इलाही बख्शिशें जैसे —

मायकी सुख

आत्म सुख

शान्ति

अॅटल खुशी

आत्म-रंग

आत्म-रस

प्रेम-रस

आदि सहज स्वाभाविक ही प्राप्त हो जाते हैं।

'मायकी मंडल' का ज्ञान मृत्यु के बाद हमारी आत्मा के साथ नहीं जाता, परन्तु **आत्म-मंडल** की खोज का **अनुभवी ज्ञान** हमारी 'आत्मा'

के साथ जाता है और अगले जन्मों में भी हमारा **मार्गदर्शन करता तथा सहायक होता है।**

'बुद्धि' के द्वारा हम कुदरत के किसी एक **'विषय'** की खोज-बीन कर सकते हैं परन्तु **'अनुभवी तत्व-ज्ञान'** के द्वारा **लोक-परलोक की सम्पूर्ण जानकारी तथा 'ज्ञान'** हो जाता है।

परन्तु हम 'वैज्ञानिक **अविष्कारों'** द्वारा सृष्टि की **छान-बीन करने में ही मस्त हैं** तथा सृष्टि के **कर्ता** अकालपुरुष को भूल चुके हैं।

इस सम्बन्ध में गुरबाणी हमें यूं चेतावनी देती है —

त्रै गुण पड़हि हरि **ततु न जाणहि ।।**
मूलहु **भुले** गुर सबदु न पछाणहि ।। (पृ. १२८)

माइआधारी अति अंना बोला ।।
सबदु न सुणई बहु रोल घचोला ।। (पृ. ३१३)

मूरखु सबदु न चीनई सूझ बूझ नह काइ ।। (पृ. ९३८)

इसका अर्थ यह नहीं कि हम विज्ञान की खोज न करें। जब तक हम इस दुनियां में रहते हैं — अपने जीवन के सुख आराम के लिए हर प्रकार का प्रयत्न करना है।

हां ! मायकी ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा तथा अविष्यकार के साथ ही साथ अपने **कर्त्ता अकालपुरुष** को भी **सिमरन** द्वारा **याद रखना है।** उसकी रची हुई **कुदरत को देखकर, विचारकर बलिहारी जाना है।**

हम **बाहरमुखी** पाठ-पूजा, कर्म-काँड आदि में ही मस्त हैं। मन को **अन्तरमुख** करने का हमें —

ज्ञान ही नहीं
विधि ही नहीं
आवश्यकता ही नहीं।

मायकी रचना के खोजी, ज्ञानी, वैज्ञानिक तथा दार्शनिक तो अनेक मिलते हैं, **परन्तु अन्तर-आत्मा में शब्द-सुरति का खोजी कोई**

विरला ही होता है।

ऐसे जन विरले संसारे ।।
गुर सबदु वीचारहि रहहि निरारे ।। (पृ. १०३९)

ते विरले सैंसार विचि सबद सुरति होइ मिरग मरंदे ।
(वा. भा गु २८/१७)

राग नाद सब को सुणै **सबद सुरति समझै विरलोई ।**
(वा. भा गु १५/१६)

गुर का सबदु को विरला बूझै ।
आपु मारे ता त्रिभवणु सूझै ।। (पृ. १२०)

ईश्वर का स्वरूप **'आत्म प्रकाश'** है जो शब्द या नाम द्वारा सृष्टि में प्रकाशित तथा प्रवृत हो रहा है।

माया के घोर अन्धकार में जब कभी साध-संगत में विचरण करते हुए 'सिमरन' के द्वारा हमारे उनमन पर आत्म प्रकाश की चमक पड़ती है तो हमारे हृदय में **अनुभवी ज्ञान प्रज्जवलित** हो जाता है।

इन **आत्म प्रकाश की झलकों** द्वारा तत्व 'शब्द' को —

बूझना

सीझना

चीनना (समझना)

पहचानना

अनुभव करना

ही **'अनुभवी तत्व ज्ञान' है ।**

'आत्म-प्रकाश' के मंडल की इन झलकों को समझना, बूझना हमारी सीमित बुद्धि के दायरे से दूर की बात है।

पड़ीऐ गुनीऐ नामु सभु सुनीऐ अनभउ भाउ न दरसै ।।
लोहा कंचनु हिरन होइ कैसे जउ पारसहि न परसै ।।
(पृ ९७३-७४)

चीनत चीतु निरंजन लाइआ ।।
कहु कबीर तौ अनभउ पाइआ ।। (पृ ३२८)

गुर परसादी जाणीऐ तउ अनभउ पावै ।। (पृ ७२५)

सबद सुरति लिवलीण होइ अनभउ अघड़ घड़ाए गहणा ।
(वा.भा.गु १८/२२)

गुरबाणी 'आत्म-प्रकाश' के अनुभव में से उच्चरित हुई है इसलिए गुरबाणी का **'तत्व-सार' आन्तरिक भाव हमारी सीमित बुद्धि** की छान-बीन, समझ तथा पकड़ से परे है। इसी कारण हम 'गुरबाणी' के **गुप्त भावों तथा भेदों का आत्मिक रंग-रस पान करने में 'असमर्थ' हैं।** हम **अपनी अपनी बुद्धि के अनुसार** 'गुरबाणी' के शाब्दिक अर्थ या भावों के **ऊपरी (नाममात्र)** विचारों से ही **'संतुष्ट'** हैं। इस भ्रांति के संबंध में 'गुरबाणी' यूं ताड़ना करती है —

सबदु न चीनै कथनी बदनी करे बिखिआ माहि समानु ।।
(पृ ३९)

एकु सबदु तूं चीनहि नाही फिरि फिरि जूनी आवहिगा ।।
(पृ ४३४)

सबदु न जाणहि से अंने बोले से कितु आए संसारा ।। (पृ ६०१)

पड़हि मनमुख परु बिधि नही जाना ।।
नामु न बूझहि भरमि भुलाना ।। (पृ १०३२)

साधारणतः हम अपनी अल्पज्ञ बुद्धि के द्वारा **'शब्द'** के **'शाब्दिक स्वरूप'** को ही सुनने, समझने, विचार करने में ही संतुष्ट हो जाते हैं। परन्तु वास्तव में **'तत्व-शब्द'** का कोइ **गुप्त भेद** है जिसे केवल

अनुभव द्वारा ही —

जाना

बूझा

समझा

सीझा

पहचाना

विचारा

अभ्यास किया

ध्यान किया

मन में बसाया

प्यार किया

अनुभव किया

जा सकता है।

इसका यह अर्थ नहीं कि हम **'गुरबाणी'** के अर्थ तथा भाव अर्थ न समझें। सगुण संसार में रहते हुए हमें **'गुर शब्द'** के शाब्दिक स्वरूप **'गुरबाणी'** के अनुसार जीना है तथा भावना सहित पाठ, कीर्तन और विचार करना है जो आत्मिक मार्ग के लिए अत्यंत आवश्यक है।

परन्तु जिस **'आत्मिक प्रकाश'** में से **गुरबाणी** आई है उस **'अनुभवी देश'** अथवा **'प्रकाश मंडल'** की ओर ले जाने के लिए —

सतसंगत

तथा

सिमरन

ही कारगर साधन है !

इसलिए हमें इन दोनो — 'मानसिक' मंडल तथा 'आत्मिक' मंडल के साधनों का ज्ञान होना आवश्यक है।

परन्तु मानसिक **दिमागी ज्ञान** तथा **शारीरिक साधना** को ही **'धार्मिक मंजिल का शिखर'** समझ लेना हमारा **भ्रम** है।

वास्तव में **'आत्मिक-मंडल'** के लिए शारीरिक और मानसिक साधना —

साधन हैं — पूर्णता नहीं !

हमारी मंजिल तो 'शब्द-सुरति' का मेल है अथवा हमारी सूक्ष्म सुरति ने 'तत्व शब्द' में लिवलीन होना है !

शब्द-सुरति के मेल द्वारा ही 'अनहद-धुन' को अनुभव द्वारा सुनना है।

सिद्ध-गोष्ठी में सिद्धों के प्रश्न :—

तेरा कवणु गुरू जिस का तू चेला ।। (पृ. ९४२)

के सम्बन्ध में गुरू नानक साहिब ने उत्तर दिया —

सबदु गुरू सुरति धुनि चेला ।। (पृ. ९४३)

— अर्थात मेरा **'गुरू' शब्द** है तथा गुरू में **'सुरति' जोड़ना ही 'चेला'** बनना है।

जिस प्रकार **'सर्प'** बीन के राग की **'धुन'** में मस्त हो कर उस **'धुन'** के उतार-चढ़ाव के पीछे-पीछे **रेंगता** है या **मोर** बादलों की गर्जना सुनकर खुशी में झूम उठता है, **नृत्य** करता है —उसी प्रकार जिज्ञासु ने 'शब्द-सुरति' की कमाई द्वारा **'अनहद धुन' में मस्त होना है।**

जब मन **'अनहद-धुन'** सुनता है तो विस्माद हो कर **'आश्चर्य-जनक' 'रस'** पीता है तथा 'वाह-वाह' के **आत्मिक-हिंडोले** पर चढ़ कर वह किसी **विस्मादित 'रंग'** में कह उठता है —

माई री पेखि रही बिसमाद ।।

अनहद धुनी मेरा मनु मोहिओ अचरज ता के स्वाद ।।

(पृ १२२६)

अनहदो अनहदु वाजै रुण झुणकारे राम ।।
मेरा मनो मेरा मनु राता लाल पिआरे राम ।। (पृ. ४३६)

देखहु अचरजु भइआ ।।
जिह ठाकुर कउ सुनत अगाधि बोधि सो रिदै गुरि दइआ ।।
(पृ. ६१२)

यह 'अनहद धुन' हमारी अन्तर-आत्मा में गुप्त रुप में **'आत्मिक गहराईयों' में सदा, एक-रस गूँजती है।**

यह 'अनहद धुन' ही 'शब्द' है !

तत शब्द ही 'गुरू' है !!

सुरति ही चेला है !!!

'माया' में गलतान हुई 'सुरति' — बाहरमुखी **जीव की क्रिया है ।**

'शब्द सुरति' का अभ्यास अन्तरमुखी 'आत्मा' का निराला खेल है।

रुण झुणों सबदु अनाहदु नित उठि गाईऐ संतन कै ।।
(पृ. ९२५)

तिनि करतै इकु चलतु उपाइआ ।।
अनहद बाणी सबदु सुणाइआ ।। (पृ. ११५४)

बावन अछर लोक त्रै सभु कछु इन ही माहि ।।
ए अखर खिरि जाहिगे ओइ अखर इन महि नाहि ।।१।।
जहा बोल तह अछर आवा ।। जह अबोल तह मनु न रहावा ।।
बोल अबोल मधि है सोई ।। जस ओहु है तस लखै न कोई।।२।।
(पृ. ३४०)

वाहिगुरू गुरु-सबदु लै पिरम पिआला चुपि चबोला ।।
(वा. भा. गु. ४/१७)

कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु ।। (पृ. १३७०)

यह 'सूक्ष्म-तत्व-शब्द' ही इलाही अस्तित्व का —

प्रकटाव है

प्रतीक है

प्रकाश है

प्रमाण है

निशान है।

शब्द तथा 'नाम' आत्मिक प्रकाश के प्रकटाव तथा प्रतीक हैं ।

सबदे ही नाउ ऊपजै सबदे मेलि मिलाइआ ।। (पृ. ६४४)

अनहत बाणी गुर सबदि जाणी हरि नामु हरि रसु भोगो ।।
(पृ ९२१-२२)

गुर कै सबदि हरि नामु वखाणै ।। (पृ. १०५७)

गुरबाणी वरती जग अंतरि **इसु बाणी ते हरि नामु पाइदा ।।**
(पृ. १०६६)

यह इलाही **'तत्व शब्द'** अपने 'स्त्रोत' **निरंकार** की भान्ति **अति सूक्ष्म तथा अरुप** है। ऐसी सूक्ष्म वस्तु को **उसी सूक्ष्मता** के स्तर (wave length) पर ही पकड़ा जा सकता है या **अनुभव किया जा सकता है।**

इसलिए 'तत्व शब्द' को पकड़ने के लिए अथवा शब्द के साथ मिलाप के लिए हमारी **'सुरति' भी उसी सूक्ष्म स्तर** (wave length) पर होनी चाहिए । जैसे जालन्धर-रेडियो-स्टेशन तथा हमारे रेडियो के मीटर एक ही स्तर (wave length) या नम्बर पर हो, तभी इन **दोनों का मेल हो सकता है** और जालन्धर-रेडियो-स्टेशन की आवाज हमारे रेडियो पर सुनी जा सकती है।

'सूक्ष्म सुरति' में यह सामर्थ्य है कि यह —

ईश्वरीय भय

ईश्वरीय विस्माद

दैवीय प्रेम

अनहद नाद

नाम धुन

का **अनुभव द्वारा** आन्नद उठाते हुए त्रिगुणी माया की सीमा पार करके **'तत्व' शब्द** में समा सकती है। यह सूक्ष्म **'सुरति की देन'** चौरासी लाख योनियों में केवल **'मनुष्य'** को ही प्राप्त है।

हाथ पैर दे दाति कर सबद सुरति सुभ दिसटि दुआरे ।

(वा. भा. गु. १८/३)

जिस प्रकार 'शब्द' संसार तथा निरंकार के बीच एक **'पुल'** है। उसी प्रकार **सुरति** भी **'सूक्ष्म तत्व शब्द'** तथा **स्थूल 'शाब्दिक शब्द'** के बीच अनुवादक (interpreter) है। यह सुक्ष्म **'तत्व-शब्द' को अनुभव करके स्थूल दृष्यमान** शब्दों में वर्णन कर सकती है जैसे कि **गुरबाणी !** इसी प्रकार या स्थूल दृष्यमान शाब्दिक 'गुरबाणी' में दर्शाए दैवीय गुणों को **अन्तरात्मा में अनुभव करके आत्मिक** रस-पान कर सकती है।

'सुरति' ही संसार तथा निरंकार के बीच 'तत-शब्द' रूपी 'पुल' को अनुभव करके जीव को मायकी भवसागर से पार करा सकती है।

जैसे जल महि कमलु निरालमु मुरगाई नै साणे ।।

सुरति सबदि भव सागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे ।। (पृ. ९३८)

परन्तु इस **अन्तरमुखी सूक्ष्म 'खेल'** को केवल **'साध-संगत'** तथा **'गुर प्रसाद'** द्वारा **'सिमरन'** करके ही बूझा, जाना तथा अनुभव किया जा सकता है।

इस तथ्य को भाई गुरदास जी की पंक्तियों में यूं दर्शाया गया है —

सबद सुरति लिव सावधान

गुरमुखि पंथ चलै पगु धारै । (वा. भा. गु.३७/२७)

सबद सुरति लिव साधसंगि
गुर किरपा ते अंदरि आणै । (वा. भा. गु. ६/१९)

साधसंगति गुरु सबदु कमाई । (वा. भा. गु. १६/१)

साधसंगति गुरु सबद विलोवै । (वा. भा. गु. २९/९)

जब कभी साध-संगत में **'सिमरन'** करते हुए मन निर्मल होता है तो इस पर गुरबाणी की आन्तरिक सूक्ष्म भावना की —

चमक पड़ती है
छूह लगती है
चोट लगती है
जीउ जाने (आत्म अनुभव) होता है

तब हमारा मन 'उनमन' होकर 'सूक्ष्म सुरति' द्वारा —

'नाम'
'शब्द'
'जीवन-रौ'
'हुक्म'

को बूझ कर, जान कर, पहचान कर 'अनुभव' करता है तथा रस पान करता है।

मन की सुरति-वृत्तियों को

—मायकी मंडल से **मोड़कर**
—**एकाग्रचित** होकर
—अज्ञानता के **अंधकार को चीर कर**
—ईश्वर की 'भूल' में से निकलकर
—ईश्वर की याद में सिमरन द्वारा
—साधसंगति में विचरण करते हुए
—गुरप्रसाद, कृपा-दृष्टि द्वारा

शब्द-सुरति का मेल होता है।

इस प्रकार हमारे मन-तन-हृदय का अन्धकार या **भ्रम** यूं उड़ जाता है जसै सूर्य उदय होने पर अंधेरा !

गुर परसादि सहज घरु पाइआ मिटिआ अंधेरा चंदु चड़िआ ।।
(पृ. ३९३)

यह ही अन्दरूनी **अनुभवी आत्मिक अवस्था या 'बुध बदली सिध पाई' का इलाही करिश्मा** है—जिसके विषय में मायिकी मंडल वाले बाहरमुखी जीवों को कोई ज्ञान नहीं।

'शब्द-सुरति' के मेल द्वारा गुरू की कृपा के कारण जीव को सभी आत्मिक बख्शिशें प्राप्त हो जाती हैं। जिससे हमारे अन्दर आत्मिक आनन्द, प्रभु-प्रेम तथा अटल सुख की ठंड छा जाती है —

सबद सुरति सुखु ऊपजै प्रभ रातउ सुख सारु ।। (पृ. ६२)

साधसंगति संसार विचि सबद सुरति लिव सहजि बिलासी ।
(वा. भा. गु १५/२१)

सबदु सुरति लिव पिरम रसु अकथ कहाणी कथी न जाई ।
(वा. भा. गु १६/१०)

सबदि सुरति लिवलीणु होइ दरगह माण निमाणा पाए ।
(वा. भा. गु ८/२४)

'शब्द सुरति' के मिलाप के इलावा कोई और रास्ता **'तत्व शब्द'** या **'शब्द गुरू'** तक नही जाता ।

सबद सुरति बिनु आवै जावै
पति खोई आवत जात हे ।। (पृ. १०३१)

परन्तु यह 'शब्द सुरति' का अभ्यास सरल नहीं, क्योकि जन्म-जन्मांतरों से हमारी सुरति **'माया के बहुरंगो'** में प्रवृत हो कर रस पाने के लिए नवीनता या भिन्न्ता ढुँढती है, नहीं तो उचाट होकर चुपचाप **खिसक जाती है!**

माइआ चित्र बचित्र बिमोहित बिरला बूझै कोई ।। (पृ. ४८५)

इसलिए सतगुरों ने हमारी 'सुरति' को अनेक मायकी रसों से मोड़ने के लिए प्रभु के **'अनंत तरंगों'** वाली रसीली तथा विस्मादी (सिफत सलाह) प्रशंसा तथा रंगीली **'प्रेमा-भक्ति'** के —

बार बार 'सिमरन' अभ्यास

द्वारा नई तथा उत्तम जीवन-दिशा की **ओर अग्रसर किया है** । इस प्रकार हमारी सुरति मायकी रस-कस में से निकल कर प्रभु की —

विस्मादी प्रशंसा

प्रेम

प्यार

चुप प्रीत

शुक्र

प्रार्थना

भय भावना

वैराग्य

की इलाही भावनाओं में उड़ान भरती है । इस लिए 'शब्द-सुरति' के मिलाप के लिए या 'मनमुख' से गुरमुख बनने के लिए **भावना-सहित अन्तरमुख हो कर 'सिमरन' करना आवश्यक है।**

प्रभ कै सिमरनि अनदिनु जागै ।। (पृ. २६२)

बार बार बार प्रभु जपीऐ ।।

पी अंम्रितु इहु मनु तनु /kih, ।। (पृ. २८६)

— **क्रमशः**